हमारे हैं हुसैन[अ०]

श्री विश्वनाथ प्रसाद ''माथुर'' लखनवी
अनुवादक- मिर्ज़ा सज्जाद हुसैन

उर्दू के युग प्रवर्तक कवि जोश मलिहाबादी की ये पंक्तियाँ बहुधा पढ़ता रहता हूँ।

कब सिर्फ़ मुसलमान के प्यारे हैं हुसैन।
चर्खे नौए बशर के तारे हैं हुसैन।।
इन्सान को बेदार तो हो लेने दो।
हर क़ौम पुकारेगी हमारे हैं हुसैन।।

मुझे इन पंक्तियों के काव्य सौंदर्य पर कुछ लिखना अभीष्ट नहीं है मैं तो उपरोक्त पंक्तियों की अंतिम पंक्ति का अद्ध भाग अपनी भावनाओं की दृष्टि से देखता रहता हूँ। क्या वास्तव में हुसैन ऐसे हैं कि शताब्दियाँ व्यतीत हो जाने के उपरांत भी प्रत्येक जाति को आज भी उनकी आवश्यकता है या प्रत्येक मनुष्य उनसे सहायता की याचना करता है। फिर यह भी विचार करता हूँ कि मनुष्य होने के नाते क्या मुझे भी यह अधिकार प्राप्त है कि जोश मलिहाबादी की भांति हम भी यह कह सकें कि ''हमारे हैं हुसैन''।

सर्वप्रथम तो हमें यह देखना और समझना चाहिए कि हुसैन कौन थे? उनका उद्देश्य क्या था? उनकी परिस्थितयाँ किस प्रकार की थीं? मानवता को उनसे क्या लाभ पहुँच सकते थे? और मनुष्य उनकी क्या सेवा कर सकता था? इसलिए कि वह संसार में प्रकट रूप में उपस्थित नहीं हैं परन्तु मुसलमानों के दृष्टिकोणानुसार वह जीवित हैं और मेरे विचार में अमर हैं। दोनों का तात्पर्य लगभग एक है, यदि क्षणमात्र के लिए इस्लाम के धार्मिक दृष्टिकोण को न भी स्वीकार किया जाए तब भी हज़रत इमाम हुसैन के जीवित होने तथा उनके अमर होने का विश्वास प्रत्येक व्यक्ति को करना पड़ेगा। हमको अपने धर्म की शिक्षाओं के प्रकाश में यह भी देखना पड़ेगा कि इमाम हुसैन और उनके उद्देश्यों में वे क्या विशेषताएं हैं जिनको देखते हुए संसार में बसने वाली प्रत्येक जाति यह कहने पर तैयार हो जाएगी कि ''हमारे हैं हुसैन''।

इमाम हुसैन, मुसलमानों के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद के छोटे नाती हैं। इस प्रकार वह अपने नाना ही की भांति इस्लाम के संस्थापकों में से एक हैं तथा इसके साथ ही साथ उनकी शिक्षाएं, उनके कर्म, उनका धैर्य, उनकी दृढ़ता, उनकी अडिगता एवं उनके पवित्र विचार ऐसे हैं जिनको प्रत्येक धर्म के अनुयायियों एवं समस्त मानव जाति को इसलिए स्वीकार करना पड़ेगा कि उनमें जो भी गुण विद्यमान हैं या जो घटनाएं उनके जीवन में घटित हुयीं उनका सम्बन्ध पूर्णतया, मानवता एवं मानव जाति से है तथा उससे इंसानियत को अत्याधिक लाभ पहुँच सकता है। हज़रत इमाम हुसैन ने केवल एक ही शिक्षा नहीं दी है बल्कि अनेकानेक प्रकार से मनुष्य को सदमार्ग का पता बताया है। जिस प्रकार एक बहती हुई नदी प्यास बुझाने में धर्म का नाम नहीं पूछती, जिस प्रकार चमकता हुआ सूर्य बिना धर्म-जाति का भेदभाव किए संसार के प्रत्येक घर में धूप पहुँचा देता है, जिस प्रकार अल्लाह प्रत्येक धर्म के अनुयायी को रोज़ी देता है, यहाँ तक कि उन लोगों का भी पेट भर देता है जो उसके अस्तित्व में विश्वास नहीं रखते तथा भौतिकता में इतने लीन हो गए हैं कि आध्यात्मिकता का लेश मात्र भी ध्यान नहीं करते। ठीक उसी प्रकार इमाम हुसैन का उपकार प्रत्येक व्यक्ति पर समान है। इन उपकारों का यह अर्थ नहीं है कि इमाम हुसैन ने सम्पूर्ण जगत में धन-दौलत वितरित की। प्रथम तो धन-सम्पत्ति उनके पास थी ही नहीं और यदि होती भी तो धन का उपकार सामयिक होता है जो कुछ समय

बीत जाने के बाद शेष नहीं रहता। वास्तव में बुनियादी बलिदान उसी को कहते हैं जो सम्पूर्ण मानव-जाति पर किया जाए। उदाहरणार्थ हज़रत ईसा (जिन्हें ईसाई अल्लाह का पुत्र मानते हैं) ने यह कहा था कि यदि कोई तुम्हारे एक गाल पर थप्पड़ मारे तो तुम्हें दूसरा गाल भी बढ़ा देना चाहिए यह एक नैतिक शिक्षा है जिससे प्रत्येक व्यक्ति लाभान्वित हो सकता है। हज़रत इमाम हुसैन ने भी ऐसी ही शिक्षाएं दी हैं तथा अपने कर्म से इस बात की शिक्षा दी है कि यदि कभी अत्याचारी तथा उसके अत्याचार से टक्कर हो जाए तो मनुष्य को क्या करना चाहिए। प्यास मनुष्य की प्राकृतिक इच्छा है और कर्बला में इमाम हुसैन पर पानी बन्द किया जाता है। तीन दिन तक पानी की एक बूँद उनको और उनके साथियों को प्राप्त नहीं होती परन्तु वह अपनी प्यास की शिकायत नहीं करते बल्कि इंसानियत के दामन में लिपटे हुए अपने एक छः मास के बालक अली असग़र को अपनी धीरता का टुकड़ा बनाकर अत्याचारियों की क्रूर दृष्टि के सम्मुख पेश करते हैं तथा संसार को यह बता देते हैं कि मानवता उस समय तक मानवता है जब तक वह अपनी सीमा में रहे, वरन् रूप रंग के प्रकट अंतर के अतिरिक्त मनुष्य तथा पशु में बहुत सी चीजें एक-सी हैं। उदाहरणतया मनुष्य में भी बढ़ने की शक्ति है, पशुओं में भी बढ़ने की शक्ति है। मनुष्य में भी चलने फिरने की शक्ति है और पशुओं में भी, मनुष्य भी खाता पीता है और पशु भी, मनुष्य भी जन्म लेता है पशु भी, मनुष्य भी मरता है पशु भी फिर वह कौन सी ऐसी विशेषता है जिसने मनुष्य को पशु से अलग कर दिया और दोनों के मार्ग एक दूसरे से पृथक कर दिये। उसी का नाम है ''मानवता'' जो पशुता से बिल्कुल अलग वस्तु है। इस मानवता की नींव नीति, प्रेम, सहृदयता, एकता एवं सहानुभूति पर रखी गई है। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि जिन मनुष्यों में नीति व प्रेम, सहानुभूति की भावना, हृदय की स्वच्छता, न हो वे मनुष्यों जैसा रूप रखने के बावजूद मनुष्य रूपी पशु कहे जाने के अधिकारी हैं। इसी बात को और इन्हीं विशेषताओं को इमाम हुसैन ने अपने छः मास के बालक के लिए पानी माँगने के समय उसको सेना के सामने लाकर स्पष्ट कर दिया।

मेरे विचार में बहुत से अवसर ऐसे भी आते हैं जब पशु में भी दया व सहानुभूति की भावना उत्पन्न हो जाती है जैसे अभी कुछ समय पूर्व तक समाचार-पत्र में यह ख़बर दृष्टिगोचर हुई कि तहसील बिलासपुर ज़िला रामपुर (यू०पी०) के किसी जंगल में एक स्त्री अपने बच्चे को गोद में लिए हुए चिकित्सालय जा रही थी, रास्ता अकेला था तथा प्रत्येक ओर सन्नाटा। झाड़ी से यकायक एक शेरनी निकल आई। स्त्री का दिल कितना, वह घबरा गई और घबराहट में उसका बच्चा गोद से छूटकर गिर गया और यह स्त्री किसी दूसरे पेड़ की आड़ में भयभीत होकर छुप गई। शेरनी उसके बच्चे के निकट आई तथा देर तक उसको चाटती रही। माता का हृदय धड़कता रहा, परन्तु उस हिंसक पशु ने बच्चे को उसकी दशा पर छोड़कर अपना रास्ता लिया। स्त्री, वृक्ष की आड़ से बाहर आई तथा अपने बच्चे को उठाकर चली गई। यदि इस घटना को थोड़े समय के लिए यज़ीदी सेना के सिपाहियों की क्रूरता व अत्याचार के मुक़ाबले में प्रस्तुत किया जाए तो जानवर होने के बाद क्या यह शेरनी उस हुरमुला (मनुष्य) से श्रेष्ठ सिद्ध नहीं होगी, जिसने छः महीने के बालक अली असग़र (इमाम हुसैन के सुपुत्र) को प्यासा देखने के बाद भी अपने तीर का निशाना बना दिया।

मैं इससे पूर्व लिख चुका हूँ कि व्यवहार तथा आचरण ही मनुष्य को मनुष्य तथा पशु को पशु बना देते हैं। शेरनी ने एक बच्चे पर दया करने के बाद यह सिद्ध कर दिया कि यदि वह मनुष्य के रूप में कर्बला के रणक्षेत्र में होती तो वह न करती जो व्यवहार हुरमुला ने अली असग़र के साथ किया। अतएव यह बात स्वीकार करना पड़ेगी कि इमाम हुसैन[अ०] ने अपने बच्चे अली असग़र का क़त्ल होना (शहादत) तो अवश्य मंज़ूर कर ली परन्तु मानवता तथा पशुता को अलग-अलग करके दिखा दिया एवं अपने व्यवहार से यह आदर्श शिक्षा हम तक पहुँचा दी कि चरित्र की मलिनता अथवा पवित्रता ही से पशुता और मानवता का अंतर स्पष्ट होता है।

कर्बला की घटना को जानने और समझने के लिए अब इतिहास के अध्ययन की आवश्यकता शेष नहीं रह गई है क्योंकि दुनिया प्रतिवर्ष मोहर्रम में उन घटनाओं को दोहराती रहती है। यथाकारेण मुझे कर्बला की घटना

का विस्तार पूर्वक वर्णन करना नहीं है केवल इतना कहना मात्र है कि एक ओर माविया का पुत्र यज़ीद था जिसने हिंसा व अत्याचार का बोलबाला कर दिया, मदिरा पान जिसको अत्यंत प्रिय था, व्यभिचार में जिसने मानवता तक का त्याग कर दिया था। ऐसी दशा में हज़रत इमाम हुसैन यह क्योंकर देख सकते थे कि नीति, प्रेम तथा एकता कि जिसके झंडे को उनके नाना हज़रत मुहम्मद ने ऊँचा किया था, कुछ वर्षों बाद ही यज़ीद अपने दुराचरण से गिराने पर तैयार हो गया तथा उसनेयह तय कर लिया था कि सम्पूर्ण विश्व को अपने जैसा बनाये बिना नहीं रहेगा मानवता एवं पशुता की सीमाओं को इस प्रकार मिला देगा कि मानव-जाति के लिए मानवता व पशुता में अंतर करना दुष्टकर हो जाए।

जब यज़ीद ने यह देखा कि संसार का वातावरण मेरे पक्ष में ही है तथा केवल इमाम हुसैन और उनकी शिक्षाओं का पालन करने वाले मेरे मार्ग में बाधक सिद्ध हो सकते हैं तो उसने इमाम हुसैन से बैअत (अपने को ही ख़लीफ़ा मान लेने की प्रतिज्ञा) लेना तय कर लिया। बैअत का तात्पर्य है दूसरे की आत्मिक भावनाएं क्रय कर लेना, उसे अपना दास व ग़ुलाम बना लेना। यज़ीद जानता था कि यदि इमाम हुसैन ने मुझे धार्मिक अधिष्ठाता (ख़लीफ़ा) स्वीकार कर लिया तो यह उसकी विजय होगी तथा हुसैनी मिशन समाप्त हो जाएगा और यदि हुसैन ने मुझे ख़लीफ़ा मानने से इनकार कर दिया तो उनको क़त्ल कर देने के बाद वह विश्व से मानवता के संहार कर देने में सफ़ल हो जायेगा।

यदि इमाम हुसैन पूर्णतया युद्ध की तैयारी करने के बाद दस बीस हज़ार की सेना लेकर यज़ीद के मुक़ाबले में आ जाते तो फिर सम्भव है कि कर्बला के युद्ध पर दो ''राजकुमारों की लड़ाई'' का संदेह हो जाता। परन्तु इमाम हुसैन जैसा बुद्धिमानी, धीर, वीर, सदाचारी, दूरदर्शी तथा कूटनितिज्ञ महान व्यक्ति यज़ीद की चाल से परिचित हो चुका था। इसलिए हज़ारों सेनानियों के मुक़ाबले में वह सेना नहीं लाए, बल्कि कुछ वृद्धाओं, बालकों और नवयुवकों को साथ लेकर उस समय कर्बला में आए, जब यज़ीद की सेना ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया था और उनके लिए केवल दो ही बातें शेष रह गयीं थीं। वह यज़ीद को धार्मिक अधिष्ठाता स्वीकार करके अपने प्राणों का संरक्षण कर लेते या क़त्ल (शहीद) हो जाते। यज़ीद को ख़लीफ़ा मानने से वह सदैव इनकार करते रहे यथाकारेण शहीद होना स्वीकार कर लिया। उन्होंने यज़ीदी शक्तियों को दिल खोलकर अत्याचार करने का अवसर दिया परन्तु पाशविक शक्ति के आगे शीश नवाने पर तैयार न हुए। धन-सम्पत्ति ही नहीं उन्होंने सत्य पर, धर्म पर तथा मानवता पर संतान तक को बलिदान कर दिया। यहाँ तक कि छः मास के बालक का क़त्ल हो जाना भी स्वीकार कर लिया परन्तु एक भ्रष्टाचारी के हाथ में हाथ देकर अपने प्राणों की रक्षा करना, अच्छा न समझा।

यही कारण है कि कर्बला की घटना का अध्ययन मानवता तथा पशुता की सीमाओं को एक दूसरे से बिल्कुल अलग करके दिखा देता है और इमाम हुसैन यह बता देते हैं कि मनुष्य पर चाहे कितने ही अत्याचार व प्रहार क्यों न हो, इंसान को धैर्य एवं दृढ़ता का त्याग नहीं करना चाहिए तथा असत्य के आगे सर न झुकाना चाहिए।

यह भी एक निर्विवाद सत्य है कि विश्व में जितनी महत्वपूर्ण घटनाएं घटित हुईं वे अधिकतर उसी धर्म के अनुयायियों द्वारा हुईं उदाहरणार्थ हज़रत ईसा को सूली (फांसी) पर चढ़ाने वाले वैसे तो दूसरे धर्म के मानने वाले थे परन्तु इस अत्याचार का कारण उनके अनुयायियों का विरोध ही था। इमाम हुसैन को भी यदि विश्व की कोई अन्य जाति जैसे ईसाई या यहूदी शहीद करती तो सम्भवतः दुनिया पर आपके अद्वितीय बलिदान का प्रभाव उतना अधिक दृष्टिगोचर न होता जितना कि आज दिखाई पड़ रहा है। यह बात तो स्वतः विदित एवं स्वयं सिद्ध है कि एक देश पर दूसरे देश का आक्रमण कर देना, एक की धन-सम्पत्ति पर दूसरे का क़ब्ज़ा कर लेना कोई विशेष महत्व की वस्तु नहीं क्योंकि यह तो प्रतिदिन हुआ करता है। परन्तु वे अत्याचार अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं कि जो अपनों के हाथों अपने ही पर किए जाएं।

यज़ीद के पूर्वज अधर्मी (काफ़िर) थे और पिता तथा दादा (अबुसुफ़यान और माविया) ने हृदय से इस्लाम को नहीं अपनाया था परन्तु यज़ीद ने न केवल मुसलमान

होने का दावा किया बल्कि बिना योग्यता एवं अधिकार रखने के मुसलमानों का धार्मिक अधिष्ठाता भी बन बैठा। हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर जैसे व्यक्ति ने भी पहले यज़ीद को ख़लीफ़ा मानने से इनकार किया परन्तु बाद में धन वैभव के लोभ में उन्होंने भी यज़ीद ऐसे दुष्ट चरित्र व्यक्ति को अपना धार्मिक अधिष्ठाता स्वीकार ही कर लिया। दुनिया के प्रत्येक इस्लामी इतिहास में उनका पहले यज़ीद को ख़लीफ़ा न मानने का वर्णन भी मिलता है और फिर उनका यज़ीद को धर्म-गुरु स्वीकार करने का विवरण भी मिलता है। हमें इस समय इस बात पर दृष्टिपात नहीं करना है कि उन्होंने पहले यज़ीद को ख़लीफ़ा मानने से क्यों इनकार किया और बाद में क्यों मान लिया क्योंकि यह बात वे लोग भली प्रकार समझ सकते हैं जो आज भी मुसलमान होने के बावजूद ''ख़िलाफ़ते माविया व यज़ीद'' (इस पुस्तक में यज़ीद को वास्तविक ख़लीफ़ा सिद्ध करने का असफ़ल प्रयास किया गया है और इमाम हुसैन को एक बाग़ी के रूप में प्रस्तुत करने का दुस्साहस भी किया गया है) जैसी पुस्तक लिपिबद्ध कर सकते हैं। हमें इस समय इस पुस्तक के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करना नहीं हैं परन्तु हम यह अवश्य स्पष्ट करना चाहते हैं जो भी अत्याचार प्रचुर मात्रा में हुए हैं उनमें क़त्ल करने वाला और क़त्ल होने वाला, अत्याचारी एवं अत्याचार सहन करने वाला, एक ही सम्प्रदाय से सम्बन्धित आपको मिलेंगे अर्थात यज़ीद तो 1300 वर्ष पूर्व मर चुका, उसके अत्याचारों से केवल मुसलमानों ही का नहीं, बल्कि विश्व का इतिहास परिपूर्ण है, परन्तु वह अत्याचार करने वाला आज संसार में नहीं था तो इसलिए पाकिस्तान में एक ऐसा व्यक्ति जन्मा जिसने न केवल इस्लाम और मुसलमानों के, बल्कि ''मानवता-संसार'' के विरूद्ध एक बार फिर बग़ावत (विरोध) का झंडा ऊँचा कर दिया।

''ख़िलाफ़ते माविया व यज़ीद'' नामक पुस्तक को हमने नहीं पढ़ा 'कोटेशन' हम ने अवश्य पढ़े हैं जिनको पढ़ने के बाद हम ने यह अनुमान लगा लिया कि अब भी संसार में ऐसे व्यक्ति पाए जाते हैं जो नरक को स्वर्ग, और स्वर्ग को नरक के नाम से याद करते हैं यही नहीं बल्कि निकले हुए सूर्य की उपस्थित और चौदहवीं के चाँद की छिटकी हुई चांदनी से भी इनकार करते हैं। हमें नहीं मालूम कि पाकिस्तान में कोई पागलख़ाना है या नहीं, परन्तु महमूद अहमद अब्बासी (जो कि उपरोक्त वर्णित पुस्तक के लेखक हैं) जैसे पागलों एवं बुद्धि के शत्रुओं का इलाज संसार का कोई पागलख़ाना भी नहीं कर सकता। इसलिए कि असत्य एवं अवास्तविकता से तो इनकार सम्भव है, किन्तु वास्तविकता से इनकार बिल्कुल ऐसा ही है जैसे कोई व्यक्ति उज्जवल आकाश पर प्रकाशमान तारागणों, चन्द्रमा की चन्द्रिका एवं मध्यान्ह (दोपहर) की धूप से इनकार कर दे।

कहने का आशय केवल इतना है कि विश्व ने फिर एक बार समझ लिया कि यज़ीद तो जन्म लिया ही करते हैं और लिया करेंगे, परन्तु हुसैन सृष्टि के आरम्भ से आज तक केवल एक ही हुए और अंत तक अब किसी दूसरे हुसैन का पैदा होना सम्भव नहीं।

इमाम हुसैन (जैसा कि पहले लिख चुका हूँ) मानव-जगत के सबसे बड़े उपकारी हैं। उन्होंने तेरह सौ वर्ष पूर्व कर्बला में तीन दिन तक बिना पानी पिये तथा दूसरी अनेकानेक विघ्न, बाधाओं, अड़चनों, आपत्तियों एवं अत्याचारों का सामना करने के बाद भी यज़ीद की सेना के नायक उमरे साद से यह भी कहा था कि यदि तू मेरी दूसरी शर्त न भी स्वीकार करे तो कम से कम इसकी आज्ञा दे दे कि मैं इराक़ नामक देश छोड़कर भारतवर्ष चला जाऊँ। शायद मुझे अब यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि जिस समय इमाम हुसैन ने भारतवर्ष आने की इच्छा प्रकट की थी, उस समय भारत में न कोई मस्जिद बनी थी, न कोई मुसलमान रहता था। मैं नहीं समझता कि इमाम हुसैन ने भारतियों में ऐसी कौन सी विशेषता देखी कि जिससे बाध्य होकर उन्होंने न तो यह कहा कि मुझे चीन जाने दो, न यह कहा कि ईरान की ओर प्रस्थान करने दो, भारतवर्ष को ही क्यों याद किया। मेरा विश्वास है कि वह यह जानते थे कि भारत में मेरे प्रेमी अरब से कहीं अधिक पैदा हो जाएंगे और जैसा उनका विचार था वैसा ही हुआ।

सबसे पहला ताज़िया भारत में सरपर रखकर लाने वाला सम्भवतः तैमूर राजा था परन्तु इस्से पहले भी हिमालय की बहुत सी चोटियों पर हुसैन की पोथी पढ़े

जाने की आवाजें वातावरण में गूँजा करती थीं। मुझे यह नहीं ज्ञात है कि इमाम हुसैन का बखान करने वाले ये लोग किस धर्म के अनुयायी थे, परन्तु एतिहासिक तथ्यों को अस्वीकार करना सम्भव नहीं है, अतएव कहना ही पड़ेगा कि हुसैनी ब्राहम्ण उन पर किये गए अत्याचारों को याद करके अशु-धारा प्रवाहित किया करते थे और आज भी भारत में हुसैनी ब्राहम्णों की कमी नहीं है। केवल ब्राहमाणों ही पर क्या निर्भर है, वह कौन सा हिन्दू है जिसको इमाम हुसैन से लेश-मात्र भी शत्रुता या विरोध हो क्योंकि यदि हिन्दुओं को इमाम हुसैन से (अल्लाह न करे) शत्रुता होती महाराजा ग्वालियर क्यों करोड़ों रुपया ताज़ियादारी के नाम पर लुटाते, महाराजा इन्दौर क्यों लाखों रुपया हुसैन के नाम पर व्यय करते, महाराज जयपुर, महाराजा जोधपुर क्यों बड़े शानदार ताज़िये रखते। इसके अतिरिक्त व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से सहस्त्रों हिन्दू क्यों इमाम हुसैन से श्रद्धा रखते। यह हमें मालूम है कि किसी मुसलमान ने हिन्दुओं से नहीं कहा था कि अज़ादारी (हुसैन के आदर्श बलिदान का वर्णन, ताज़िया रखना आदि) करो, किसी मौलाना साहब ने हिन्दुओं से यह अपील नहीं की थी कि तुम भी हुसैन का वर्णन करने और मोहर्रम मनाने में हमें सहयोग प्रदान करो।

भारत क्योंकि सदा से अपने अतिथि-सत्कार के लिए प्रसिद्ध रहा है और हम भारत निवासी यथा सामर्थ्य अतिथियों का स्वागत करते रहे हैं। अतएव यदि इमाम हुसैन जैसा कि उन्होंने कहा था, भारत-भूमि के पदार्पण करने का अवसर पा जाते, तो हम नहीं कह सकते कि उस समय हिन्दू-जाति उनकी क्या सेवा करती, परन्तु हम लोगों की अज़ादारी और हम लोगों का इमाम हुसैन प्रशंसा में कविताएं कहना एवं लेख लिखना आदि इस बात का प्रमाण है कि इमाम हुसैन के केवल इतना कहने पर कि वह भारतवर्ष आना चाहते थे, यद्यपि अत्याचारियों ने उनको यहाँ आने नहीं दिया, फिर भी हम लोग उनसे इतना प्रेम व श्रद्धा रखते हैं, किन्तु यदि वह आ जाते तो उस समय शायद संसार देख लेता कि कर्बला में इमाम हुसैन का रौज़ा (पवित्र-समाधि) केवल सोने का बना है, परन्तु भारत में उनका रौज़ा (पवित्र-समाधि) सम्भवतः आभूषणों से तैयार किया जाता।

उनके यहाँ न आने के बावजूद भी क्या भारत-भूमि में उनकी पवित्र समाधि (रौज़े) की नक़लें मौजूद नहीं हैं? क्या उस नक़्शे को सामने रखकर भारत के अनेकों नगरों में कर्बलाएं निमित नहीं करायी गईं? यह कर्बलाएं तो हमारे शिया-भाईयों ने बनवाई हैं और उन्हीं को निर्मित भी कराना चाहिए थीं, परन्तु आप यह न समझ लीजिएगा कि हिन्दुओं ने इमामबाड़े नहीं बनवाए। ग्वालियर में हिन्दू राजा का बनवाया हुआ इमामबाड़ा देखा जा सकता है और लखनऊ में भी ठाकुरगंज का इमाम बाड़ा मेवा राम का बनवाया हुआ है और झाऊलाल ने भी एक इमामबाड़ा बनवाया था, शोक का विषय है कि वह आज मौजूद नहीं। जयपुर नगर की एक-मात्र सुन्दर कर्बला भी एक हिन्दू-सज्जन की ही बनवाई हुई है। राजा टिकैत राय का वक़्फ़ (Waqf) आज तक मौजूद है। बात यहीं तक सीमित नहीं है। हिन्दू-कवियों ने इमाम हुसैन की प्रशंसा में असंख्य कविताएं कहीं हैं। प्राचीन हिन्दू-कवियों ही ने नहीं बल्कि आज के हिन्दू-कवियों (शायरों) ने भी इमाम हुसैन की सेवा में काव्य-श्रद्धांजलि अर्पित करना अपना कर्तव्य समझ लिया है। मैं स्वयं भी इमाम हुसैन की प्रशंसा में कविता रचने में अपना अधिक समय देता हूँ। श्री लालता प्रसाद "शाद" जैसे भाषा-पंडित आज से दो वर्ष पूर्व जीवित थे, और दुनिया जानती है कि उन्होंने इमाम हुसैन और उनके मिशन की जितनी सेवा की, उतनी सम्भवतः अपने धर्म की भी न की होगी। शोक! कि आज वह इस संसार में नहीं हैं परन्तु उनकी याद हर इमाम हुसैन के प्रेमी के हृदय में विद्यमान रहेगी।

यह सब बातें जो आपने उपरोक्त लेख में पढ़ी हैं, इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि इमाम हुसैन केवल मुसलमानों ही के नहीं, बल्कि प्रत्येक उस मनुष्य के हैं, जिसको नीति व प्रेम से सम्बन्ध है। अतः अब तो आप समझ गए होंगे कि जिस प्रकार विश्व का प्रत्येक इमाम हुसैन का प्रेमी कह सकता है कि इमाम हुसैन हमारे हैं, उसकी प्रकार 'माथुर' लखनवी भी यह कह सकता है कि "हमारे हैं हुसैन"।

(इमामिया मिशन प्रकाशन न० 313 मुहर्रम 1373हि०)